अपने में ही एक और दलित ढूंढ लेता है, कि हम तो इनसे ऊपर है ।इस प्रकार की मानसिकता है ।

कई बार हिंदी में दलित साहित्य पर यह आक्षेप लगाया जाता है कि यह विद्रोह का स्वर है, इसमें निराशा है, आशावादिता नहीं दिखाई पड़ती है, यह शोषितों की पुकार है ।जैसे शरण कुमार लिम्बाले लिखते है कि " मैं मनुष्य हूँ, मुझे मनुष्य के सभी हक मिलने चाहिए|" यह भी आरोप लगाया जाता है, कि दलित साहित्य में दीन-दुखियों का आक्रोश एवं रूदन है ।दयानन्द बटरोही कहते है कि "दरअसल दलित लेखकों का आक्रोश, आक्रोश नहीं बल्कि वर्षों की चिढ़ है, यह आक्रोश, वेदना, विद्रोह, क्रोध और दीन-दुखी, उत्पीड़ित-शोषितों की अभिव्यक्ति है|" इस प्रकार की सोच दलित चेतना को आगे बढ़ने से रोकती है ।लेखकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इस प्रकार की भ्रांतियों को साहित्य लेखन के माध्यम से दूर करने का प्रयास करे ।सामाजिक वेदना के परिणामस्वरूप दलित जीवन की अभिव्यक्ति हुई ।वह उनकी मूक आवाज बनकर आया ।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा सकता है कि हिंदी भाषा के साथ-साथ अन्य भाषाओं में दलित लेखन में चुनौतियां समान है बस उनका संदर्भ अलग-अलग है ।उनका प्रदेश, क्षेत्र अलग है लेकिन समस्याएं वही है ।समाजगत रूढ़ियों को भी इन्हें अपने-आप से दूर करने का प्रयास करना चाहिए ।विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक आंदोलनों के माध्यम से इनमें समानता लाने का प्रयास किया गया है लेकिन यह समानता इतनी जल्दी नहीं आने वाली ।इसके लिए दलित साहित्य और दलित समाज और सम्पूर्ण समाज को ग्रहण करने की भावना अपनाकर, प्राचीन रूढियों को त्यागकर दलित साहित्य और दलित जीवन का उद्धार हो सकता है ।इसके मूल में शिक्षा का भी खासा योगदान हो सकता है ।शिक्षा के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित होकर, आर्थिक रूप से संबल होकर अपने समुदाय के हक़ के लिए लड़ सकता है ।

****

संदर्भ ग्रंथ:-

1.https://www.outlookhindi.com/story/magazine-1423
2.शरण कुमार लिम्बाले, 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', पृ.सं. 20
3. दयानंद बटरोही, दलित साहित्य (वार्षिकी) (2007-2008), पृ.सं.24

संत कबीर और तुलसी के श्रीराम

रमेश प्रसाद पटेल
शोधार्थी-
(हिन्दी विभाग) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. अमित शुक्ला
शोध-निर्देशक (हिन्दी विभाग)
शा. ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

शोध सारांश - कबीर के राम पर सोचते हुए मेरे मन में कई सवाल उठते हैं। कबीर के राम क्या हैं? परम्परा से आते हुए 'राम' और कबीर के राम में क्या अंतर है? कबीर विरोध और असहमति के जोश में निर्गुण राम को अपनाते हैं या इसके पीछे कोई ठोस सामाजिक कारण है? इसी सवाल से जुड़ा एक और सवाल है कि सगुण राम में ऐसी क्या अपर्याप्तता थी जिसके चलते कबीर को निर्गुण राम को चुनना पड़ा? कबीर ने निर्गुण राम की भक्ति की तो उसका विरोध हुआ क्या? अगर हाँ, तो क्यों? इस विरोध के पीछे सिर्फ भक्ति की प्रतिद्वंद्विता थी या इसके पीछे भी कोई सामाजिक कारण है? ये चंद सवाल ऐसे हैं जो कबीर के राम पर गहराई से सोचने को मजबूर कर देते हैं। कबीर के राम निर्गुण हैं, निराकार हैं, अगम्य हैं, इसकी चर्चा खूब हुई है। सगुण-निर्गुण के आध्यात्मिक विवाद से परे होकर भी क्या कबीर के राम को देखा जा सकता है? मैंने इसी प्रश्न पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है।

व्याख्या - कबीर के पहले और बाद में राम-भक्ति की एक परम्परा मिलती है। वाल्मीकि से लेकर तुलसी और आधुनिक काल में निराला की कविताओं में राम की गूँज मिलती है। यह जगजाहिर है कि कबीर के राम पुराण प्रतिपादित राम नहीं हैं। उनके राम और परम्परागत राम में बुनियादी अंतर है। वाल्मीकि के राम तपस्वी शम्बूक की हत्या करते हैं क्योंकि शम्बूक शूद्र हैं। भवभूति के राम भी शम्बूक की हत्या करते हैं। यह सही है कि भवभूति के राम को शम्बूक की हत्या करते समय द्वंद्व होता है, पर हत्या करते हैं। तुलसी के राम आदर्श पुरुष हैं, पर यह प्रसंग तो खटकता ही है कि उनके प्रिय भाई लक्ष्मण शूर्पणखा की नाक इसलिए काट लेते हैं कि वह प्रणय-निवेदन कर रही थी। निराला के राम पर आवरण अवतारी राम का है, पर वे मानव हैं। राम की यह उक्ति - 'मित्रवर विजय होगी न समर' राम के भगवान् चरित्र को हिलाकर रख देती है।

कबीर के राम एक 'पावरहाउस' हैं, जहाँ से वे जातिवाद से लड़ने की शक्ति लेते हैं। उनके राम अवतारी कदापि नहीं हैं -

दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना,
राम नाम का मरम है आना।।

कबीर अपने राम को अवतारी राम की छाया से भी दूर रखना चाहते हैं। उनके राम 'कमलनयन' वाले नहीं हैं, फिर भी उनकी चेतना ज्यादा मानवीय है। कबीर अपने राम के साथ मानवीय सम्बन्ध स्थापित करते हैं - 'हरि मेरा पीव मैं हरि की बहुरिया'। अपने भगवान के साथ मानवीय सम्बन्ध की कल्पना करना बहुत बड़ी बात है। तत्कालीन समाज में शूद्रों के लिए मंदिर-

प्रवेश निषेध था, कुछ हद तक यह व्यवस्था आज तक बनी हुई है। वह शूद्र भगवान से प्यार करता है, पत्नी बनता है, भगवान के अपने भीतर होने की बात करता है। यह अपार क्रांतिकारिता और घोर सामाजिकता है। कबीर के राम मानवता की लड़ाई में एक विजयी झंडा हैं जिनके सामने कमलनयन वाले राम फीके पड़ जाते हैं। उनके राम किसी अवतारी राम से कम आदर्शवान् नहीं हैं। सिर्फ हमें परखने की दृष्टि और सहने की मानसिक क्षमता होनी चाहिए। कबीर राम के सहारे सामाजिक न्याय की लड़ाई लड़ते हैं। मुक्तिबोध ने लिखा है - ''पहली बार शूद्रों ने अपने संत पैदा किए। अपना साहित्य और अपने गीत सृजित किए। कबीर, रैदास, नाभा, सिंपी आदि-आदि महापुरुषों ने ईश्वर के नाम पर जातिवाद के विरुद्ध आवाज बुलंद की।''[1]

कबीर की चेतना अवतारी राम के साथ मेल खा ही नहीं सकती थी। वे अवतारवाद के विरोधी हैं, इसलिए निर्गुण राम को अपनाते हैं। अवतारवाद का मूल स्रोत समाज में सामंतवाद की उपस्थिति से है। तुलसी के रामराज्य से राजतंत्र का सीधा सम्बन्ध है। राजा ईश्वर का प्रतिनिधि होता है, यह पुरानी मान्यता है। बाद में राजा स्वयं ईश्वर बनने लगा। अवतारवाद सामंती तंत्र का दार्शनिक आधार है। सगुण भक्ति अवतारवाद के बिना संभव नहीं है। अवतारवाद वर्णाश्रम व्यवस्था से जुड़ा होता है। कबीर भला उस अवतारवाद को कैसे स्वीकारते, जिसके मूल में वर्णाश्रम की नैतिक स्वीकृति है। अवतारी राम कबीर का अपना कैसे हो सकता था -

'दस अवतार निरंजन कहिए सो अपना न कोई'। डॉ. धर्मवीर ने लिखा है - ''इन अवतारों ने ब्राह्मणों के कल्याण के लिए भले ही अवतार लिया हो लेकिन शूद्र के उद्धार के लिए इनमें से एक भी सामने नहीं आया।''[2], कबीर अवतारवाद के विरोधी हैं तो इसके कारण स्पष्ट हैं। वे उन देवी-देवताओं के नाम मजे में लेते हैं जो मानवता की रक्षा के लिए लड़े हैं। उनके राम नरसिंह, माधव हो सकते हैं।कबीर राम को अपने शरीर के भीतर बताते हैं -

'मोकों कहाँ ढूँढ़े बंदे, मैं तो तेरे पास में'।

वे राम को सबके भीतर बताकर एक साथ दो काम लेते हैं -

(क) भक्ति में मूर्तिपूजा, बाह्याचार और पंडित रूपी बिचौलिए से व्यक्ति बचा रहे।

(ख) चूँकि सभी के भीतर एक ही भगवान् हैं, इसलिए सभी मानव समान हैं।

कबीर सचेत कवि हैं। उन्हें पता है कि अवतारवाद की ओर ज्यों ही फिसले कि वर्णाश्रम का राक्षस दौड़ा चला आएगा। इसलिए वे बार-बार कहते हैं कि वे निर्गुण राम की भक्ति कर रहे हैं।कबीर की भक्ति में सामाजिक वेदना निहित है। वे भगवान् से प्रेम करते हैं, चौसर खेलते हैं, पर उनकी सामाजिक वेदना उभरकर सामने आ ही जाती है -

'चार बरन घर एक है रे भाँति- भाँति के लोग'।

कबीर राम से प्रेम करते-करते भटकते हैं। इस भटकन में वर्णाश्रम व्यवस्था का दर्द है। तुलसी भी राम की भक्ति करते-करते भटकते हैं, पर उनकी भटकन में वर्णाश्रम की स्थापना है। कबीर को राम के प्रेम से वेद-महिमा-मंडित सामाजिक व्यवस्था भटकाती है। तुलसी को कबीर भटकाते हैं। कबीर की भटकन में एक बड़ा उद्देश्य है। तुलसी की भटकन में राम के साथ एक छल है। वे कथा राम की करते हैं और बात वर्णाश्रम की स्थापना की करते हैं। यह छल नहीं तो और क्या...? छल करने वाला भगवान् का सच्चा प्रेमी कैसे हो सकता है? घनानंद ने लिखा है - ''अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।'' तुलसी में राम के प्रति समर्पण की भावना तब झलकती है जब वे कहते हैं कि उनमें कवि का गुण नहीं है, राम का गुणगान करना ही सब कुछ है -

''कवित्त विवेक एक नहीं मोरे।
सत्य कहऊँ लिखि कागद कोरे।।''[3]

पर इस समर्पण पर संदेह तब होता है जब वे बीच-बीच में कबीर जैसे निर्गुण भक्तों को गलियाने की जगह निकाल लेते हैं। कबीर अपने राम के माध्यम से मानव में आध्यात्मिक उत्कर्ष नहीं चाहते हैं। उनके लिए महत्वपूर्ण है समाज में मनुष्यत्व का जागरण। सत्य के दो रूप बतलाए गए हैं - पारमार्थिक रूप और व्यावहारिक रूप। पारमार्थिक सत्य में व्यक्ति-व्यक्ति में भेद नहीं होता है, पर व्यावहारिक सत्य में यह भेद जरूरी है। कबीर पारमार्थिक सत्य और व्यावहारिक सत्य में एकता की बात करते हैं और समतामूलक मानवीय समाज की माँग करते हैं। मराठी कवि शरणकुमार लिम्बाले की कविता है -

''मस्जिद से अजान की आवाज आई
सब मुसलमान मस्जिद चले गए।
गिरजे की घंटियाँ बजीं
सब ईसाई गिरजे में चले गए।
मंदिर से घंटे की आवाज आई।
आधे लोग मंदिर में चले गए,
आधे बाहर ही रहे।''[4]

आधे लोग बाहर क्यों रह गए, कबीर की मूल समस्या यही है। अगर भगवान् सचमुच सबके लिए हैं तो यह भेद क्यों? कबीर को यही प्रश्न उलझाता है, सताता है। वे उस भक्ति को ही झूठा मानते हैं जो आधे लोगों को मंदिर में घुसने नहीं देती। जो भगवान् मानव-मानव में भेद करे वह सचमुच में भगवान् है क्या...? वह पत्थर की मूर्ति के सिवा कुछ नहीं। कबीर का व्यंग्य सामाजिक वेदना के चलते यहाँ कितना तीखा हो गया है -

''पाहन पूजै हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार।
चाकी क्यों नहीं पूजिए पीस खाए संसार।।''[5]

कबीर की कठोरता में वह 'अकारण दंड' है, जो पग-पग पर उन्हें अपमानित करता है। वे अपनी सामाजिक स्थिति के चलते ही हिन्द-मुस्लिम धर्मान्धता पर प्रहार करने में सफल हुए हैं। द्विवेदी जी ने लिखा है - **''वे दरिद्र और दलित थे इसलिए अंत तक वे इस श्रेणी के प्रति की गई उपेक्षा को भूल न सके। उनकी नस-नस में इस अकारण दंड के विरुद्ध विद्रोह का भाव भरा था।''[6]** तुलसी ने कबीर के राम का खूब

विरोध किया है। कबीर के 'दसरथ सुत तिहुँ लोक बखाना....' के जवाब में वे लिखते हैं -

''तुम्ह जो कहा राम कोउ आना।
जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना।।''[7]

कबीर की कविता में राम रचे-बसे हैं। तुलसी के लिए राम से भी बड़ा है राम का भक्त। फिर तुलसी कबीर का विरोध क्यों करते हैं? क्या कबीर राम के भक्त नहीं हैं? उनसे बड़ा राम का भक्त कौन हो सकता है - 'कबीर कूता राम का, मुतिया मेरा नाऊँ'। कबीर भी रामोन्मुख हैं, फिर भी तुलसी के अनुसार वे 'अधम नर' हैं। कहा जा सकता है कि तुलसी ने निर्गुण राम का विरोध किया है। पर गौर से परखा जाए तो इस विरोध का कारण उनकी निर्गुण भक्ति नहीं है। चूँकि कबीर निर्गुण राम को अपनाते हुए वर्णाश्रम-व्यवस्था पर प्रहार करते हैं, इसलिए तुलसी उनका विरोध करते हैं। यह कहा जाता है कि वाल्मीकि से लेकर तुलसी तक राम का जो रूप चित्रित किया गया है, उसमें जो बात समान है, वह है राम के जीवन की अविरल संघर्ष परम्परा। क्या कबीर के राम कम संघर्षशील हैं? सच तो यह है कि वाल्मीकि से लेकर तुलसी तक के राम का जो संघर्ष दिखाया गया है, वह काल्पनिक जगत् का है। कबीर राम के सहारे वास्तविक जगत् से टकराते हैं, लड़ते हैं -

''पंडित बाद बदंते झूठा।
राम कह्याँ दुनियाँ गति पावै
खाँड कह्याँ मुख मीठा।।''[8]

कबीर और तुलसी के लिए सबसे बड़ी समस्या है - वर्णाश्रम। एक वर्णाश्रम को तोड़कर समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहता है, दूसरा वर्णाश्रम को बचाकर समाज को वेद-महिमा-मंडित बनाता है। तुलसी वेद की बात को समान्य जन की संवेदना में पिरोते हैं। प्रो. मैनेजर पांडेय ने बहुत ही सही लिखा है - ''वे (तुलसी) एक ओर वैदिक-पौराणिक परम्परा के लिए लोकमत में जगह बनाते हैं तो दूसरी ओर उस परम्परा में और लोकमत में अपनी जगह सुनिश्चित करते हैं।''[9] कबीर के यहाँ राम वर्णाश्रम से जिरह करने का माध्यम हैं, तुलसी के यहाँ राम वर्णाश्रम को स्थापित करने का साधन हैं। वे ब्राह्मणवादी व्यवस्था के प्रवक्ता नजर आते हैं। तुलसी भक्ति के क्षेत्र में मानव को समान मानते हैं, पर सिर्फ भक्त तक ही। भक्ति के बाहर वे ब्राह्मण को पूज्य और शूद्र को अधम घोषित करते हैं। मुक्तिबोध ने तुलसी की भक्ति-भावना के क्षेत्र में मानव को समान मानते हैं, पर सिर्फ भक्त तक ही। भक्ति के बाहर वे ब्राह्मण को पूज्य और शूद्र को अधम घोषित करते हैं। मुक्तिबोध ने तुलसी की भक्ति-भावना को परखते हुए लिखा है - ''तुलसी को भक्ति का यह मूल तत्व तो स्वीकार करना ही पड़ा कि राम के सामने सब बराबर हैं, किन्तु चूँकि राम ने ही सारा समाज उत्पन्न किया है, इसलिए वर्णाश्रम धर्म और जातिवाद को तो मानना ही होगा।''[10]कबीर जिस समाज की स्थापना करना चाहते हैं, वह तुलसी के लिए कलियुग है। तुलसी ने कलियुग के लक्षण गिनाए हैं -

(क) स्त्रियाँ स्वतंत्र हो जाती हैं।
(ख) शूद्र अपने अधिकार की बात करने लगते हैं।

सच तो यह है कि जिस व्यवस्था को तुलसी कलियुग कहते हैं, शूद्र और नारी की दृष्टि से वही सतयुग है। वे सतयुग के संस्थापक को दंभी, पाखंडी, अधम क्या-क्या कह डालते हैं। कबीर अपने राम के माध्यम से ऐसा सतयुग लाना चाहते हैं जहाँ 'एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से मनुष्य की हैसियत से मिले'। तुलसी इससे बहुत क्षुब्ध हैं। उनकी नाराजगी इस दोहे में मुखर हो रही है -

''कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भए सदग्रंथ।
दंभिन्ह निजमति कल्पि करि प्रगट किए बहुपंथ।।''[11]

तुलसी ने रामराज्य के जंजाल में अपने मत को पिरोकर अपने मत को इस तरह पेश किया है कि एक दृष्टि में वे जनवादी लगते हैं लेकिन उनके रामराज्य की मूल अवधारणा में वर्णाश्रम की प्रतिष्ठा है। शुक्ल जी ने लिखा है - ''गोस्वामी जी के समाज का आदर्श वही है जिसका निरूपण वेद, पुराण, स्मृति आदि में है; अर्थात् वर्णाश्रम की पूर्ण प्रतिष्ठा।''[12] अब एक और भक्त कवि सूर की चर्चा की जाए। सूर ने निर्गुण भक्ति के विरोध का एक अलग रास्ता अपनाया है। भ्रमरगीत का उद्धव-गोपी संवाद तपते प्रेम की मनोगाथा है, इसमें संदेह नहीं। पर इस तपते प्रेम में निर्गुण भक्ति को किस तरह झुलसाया गया है, यह देखने लायक है। भ्रमरगीत में अनेक पद निर्गुण भक्ति की निस्सारता को लेकर लिखे गए हैं। सूर ने निर्गुण के विरोध का ललित रास्ता अपनाया है, तुलसी की तरह आक्रामक शैली का नहीं। 'निरगुन कौन देस को बासी' कहकर सूर क्या कहना चाहते हैं? 'निरगुन कौन देस को बासी' और 'कबीर विदेशी परम्परा के भक्त थे', ये दोनों पंक्तियाँ दो रचनाकारों की हैं। पहली पंक्ति सोलहवीं शताब्दी का कवि लिखता है और दूसरी पंक्ति बीसवीं शताब्दी का एक आलोचक (शुक्ल जी)। दोनों में यह समानता क्यों? कबीर की कविता श्रमिक संस्कृति की कविता है। वे काम करते हुए राम का नाम लेने में विश्वास करते हैं। कबीर के राम आलसी, इधर-उधर भगवान् की खोज करने वालों को नहीं मिलते। उनके राम को निस्पृह, निश्छल प्रेम से ही पाया जा सकता है। कबीर उस राम को महत्वपूर्ण नहीं मानते जो खुद मंदिर में सोता है और व्यक्ति को समाज निरपेक्ष होकर भक्ति करना सिखाता है। वह पत्थर की मूर्ति के सिवा कुछ नहीं। कबीर ही इस बात की घोषणा कर सकते थे कि पत्थर की मूर्ति से महत्वपूर्ण चक्की है, जिससे अनाज पीसकर आदमी खाता है। तुलसी को श्रम का महत्व कहाँ पता? उनकी यह पंक्ति श्रम को झुठलाती है -

''माँगि के खैबो, मसीत को सोइबो।।''[13]

तुलसी माँगकर खाने और मस्जिद में सोने की बात करते हैं। तुलसी जैसे हिन्दू प्रेमी कवि मस्जिद में सोने की बात करते हैं। यह मुहावरा मंदिर के साथ क्यों नहीं बना है? मंदिर के साथ यह छूट हो ही नहीं सकती। कबीर के राम उन्हें काम करना सिखाते हैं। तुलसी सिर्फ राम का गुणगान करके ही संतुष्ट हो जाते हैं। निर्गुण भक्तों के यहाँ श्रम महत्वपूर्ण है। तुलसी भी रामराज्य की यूटोपिया रचते हैं, लेकिन उनका रामराज्य भी श्रेणीगत समाज

को अपनाकर ही बना है। मेरे मन में एक और सवाल उठता है कि कबीर न हुए होते तो 'मानस' का स्वरूप क्या होता? तुलसी का वर्णाश्रमी उत्साह 'कवितावली' में ठंडा क्यो पड़ गया है? हालाँकि ये प्रश्न बेतुके हैं, पर संदेह को पुष्ट करने के लिए कभी-कभी बेतुके प्रश्न भी काम के होते हैं। 'रामचरितमानस' विजयी मन की गाथा है तो 'कवितावली' हताश मन की अभिव्यक्ति। हिन्दी आलोचना में भी कबीर का विरोध खूब हुआ है। वे निर्गुण राम को अपनाते हैं और अवतारी राम का विरोध करते हैं, केवल इसलिए उनकी खरी-खोटी आलोचना नहीं हुई है। यहाँ कबीर आलोचना का शिकार हुए हैं तो इसके पीछे भी मूल कारण है - वर्णाश्रम का विरोध। कबीर की वाणी 'अटपटी' है तो निश्चित रूप से राम भी अटपटे हैं। पर वह अटपटा राम पुराण-पोषित विद्वानों के सिर का दर्द बना हुआ है। कबीर के 'प्रतिद्वंद्वी' और 'नाना पुराण निगमागम' के मर्मज्ञ कवि तुलसी को रामचरितमानस लिखने का अतिरिक्त बोझ उठाना पड़ता है। कबीर की वाणी अटपटी नहीं है। कबीर जो कहते हैं, वह विद्वानों को अटपटा लगता है। कबीर निर्गुण राम को अपनाते हैं और 'विधि विरोधी' हो जाते हैं।

कबीर भारत के राम को अपनाते हुए भी विदेशी सिद्ध किए जाते हैं। कबीर पर 'लोक विरोधी' होने का आरोप लगाया जाता है। पर क्या कबीर अपने राम के द्वारा समाज को तोड़ने की बात करते हैं जो उन्हें लोक विरोधी कवि सिद्ध किया गया है? शुक्ल जी जायसी को कबीर की तुलना में विधि पर आस्था रखने वाला और भारतवर्ष का कवि मानते हैं।

कबीर सौ प्रतिशत भक्त थे। राम उनका सहारा हैं। उनके निर्गुण राम अपनाने का उद्देश्य क्या है, यह देखना ज्यादा महत्वपूर्ण है। उनकी भक्ति का लक्ष्य क्या था, इसकी जाँच की जानी चाहिए। तत्कालीन समाज में अपनी बात कहने का 'भक्ति' एक आधार थी। चूँकि उस समाज में भक्ति या राम के सहारे ही लोग अपने आपको श्रेष्ठ घोषित करते थे, इसलिए कबीर ने राम को अपनाया, भक्ति का जवाब भक्ति से दिया और परंपरा से आती हुई भक्ति की परिभाषा बदल दी। वेदज्ञ, शास्त्रज्ञ को विद्वान माना जाता था। कबीर ने इस मान्यता को उलट दिया - 'ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय'। जिस 'मानुष सत्य' के लिए कोई व्यक्ति भक्ति करता है, वह 'फोकट का माल' कैसे हो सकता है? 'कबीर व्यक्तिगत साधना के प्रचारक थे', पर इस साधना का उद्देश्य व्यक्ति, समाज को बदलना ही तो था।

कबीर और उनके राम पर सोचने में उनको दिक्कत होती है जो भक्ति और भगवान् पर ब्राह्मणों के एकाधिकार के पूर्वग्रह से ग्रसित हैं। उन्हें यह प्रश्न बार-बार परेशान करता है कि कबीर ने ब्राह्मणी भक्ति, बाह्याचार आदि का विरोध किया तो फिर 'राम' को क्यों अपनाया? राम किसी की निजी सम्पत्ति नहीं हैं। एक ब्राह्मण का राम नाम पर जितना अधिकार है, उतना ही एक शूद्र का। अपने उसी ईश्वर को खोज रहे थे, खोज चुके थे। उनकी मानवता की लड़ाई में राम एक उत्तम टेक्नोलॉजी से बनी 'मिसाइल' हैं। भारतीय समाज के लिए 'राम' शब्द एक बहुप्रचलित ट्रेडमार्क की तरह है जिस ट्रेडमार्क का सहारा लेते हुए कबीर अपनी क्रांतिकारिता दिखाते हैं। कबीर को अपनी बात दार्शनिक नहीं, सामाजिक आधार पर कहनी थी। जायसी ने भी प्रेम का वैश्विक रूप दिखाने के लिए भारतीय लोककथा का सहारा लिया है। कबीर-तुलसी उनके राम पर हिन्दी आलोचना द्वंद्व में फँसी है। सगुण- निर्गुण की चक्की में इस तरह इनको पीसा जाता है कि उनकी मूल संवेदना दब जाती है। प्रो. मैनेजर पांडेय ने लिखा है - ''विरोधी विचार का पहले पूर्ण विरोध किया जाता है। यदि विरोध से वह नष्ट नहीं होता तो उसे विकृत किया जाता है। अगर वह विरोध और विकृति की प्रक्रिया को झेलते हुए जीवित रहता है तो उसके विद्रोही स्वर को दबाकर उसे आत्मसात कर लिया जाता है।'[13] कहीं कबीर के साथ यही साजिश तो नहीं हो रही है? आधुनिक समाज के निर्माण में कबीर की कविता कितना खाद-पानी देती है, यह देखना ज्यादा जरूरी है। सामंती समाज में रहते हुए भी कबीर वह सब कुछ कर चुके हैं जो आज की 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के युग में निर्भयता के साथ करना संभव नहीं है। अगर कोई साहस दिखाता है तो 'तस्लीमा नसरीन' बनने का खतरा बना रहता है। कबीर ने समाज और सत्ता के अगुओं की खुलकर आलोचना की। सामाजिक न्याय की लड़ाई में राम कबीर के 'सारथी' हैं। यह लड़ाई अभ खत्म नहीं हुई है। पाश की कविता है -

''हम लड़ेंगे
जब तक दुनिया में
लड़ना जरूरी है।
हम लड़ेंगे
कि लड़े बिना
दुनिया में कुछ भी नहीं मिलता।''[14]

तुलसीदास सगुण शाखा के भक्तकवि हैं। उनके आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम है। अवधी भाषा में लिखा गया ''रामचरितमानस'' तुलसी की कीर्ति का मूल आधार स्तम्भ हैं। यह सुप्रसिद्ध महाकाव्य है, जिसमें राम-कथा सात काण्डों में विभक्त है। वि.सं. 1631 में रामनवमी के दिन तुलसी ने ''रामचरितमानस'' की रचना प्रारंभ की। दो वर्ष, सात महीने, छब्बीस दिनों में ग्रंथ की समाप्ति हुई। वि.सं. 1633 में मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में राम विवाह के दिन सातों काण्ड पूर्ण हो गये। तुलसी न सिर्फ अनन्य रामभक्त थे, परंतु अपने समय के जागरुक लोकनायक भी थे। वे शील,सौंदर्य और शक्ति के उपासक थे। तुलसी की भक्ति भावना में लोक-मंगल की प्रबल भावना है। उनके आराध्य राम शील, सौंदर्य और शक्ति तीनों के गुण सागर है।

निष्कर्ष - कबीर के राम और तुलसी के राम अलग-अलग है। कबीर के राम निर्गुण ईश्वर है, निराकार ब्रह्म हैं। वे न तो दिखायी देते है, न रूप, रंग, आकार सम्पन्न है। वे न तो मूर्तिपूजा के रूप में विद्यमान हैं, और न कहीं अवतार धारण करते हैं।

वे तो सर्वव्यापी हैं, अणु-अणु में बसे हुए निर्गुण, निराकार परब्रह्म है, जिन्हें कबीर राम कहकर पुकारते है, जब कि तुलसीदास के राम सगुण ईश्वर है; साकार भगवान है, जिन्होंने राजा दशरथ के घर अवतार धारण किया है। तुलसी के राम राजा के पुत्र है, जो श्रेष्ठ मानव है। शील, सौंदर्य और शक्ति से सम्पन्न राम तुलसी के आराध्य है जो मर्यादा पुरुषोत्तम राम है। तुलसी ने अपने महाकाव्य में राम के विभिन्न रूप जैसे कि आदर्श मानव. आदर्श राजा, आदर्श पति, आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श वीर, आदर्श पिता को चित्रित किया है। तुलसी के ‘‘रामचरितमानस‘‘ और राम का प्रभाव मैथिलीशरण गुप्त के ‘‘साकेत‘‘ और राम पर पड़ा है। तुलसी के राम परब्रह्म, विष्णु के अवतार और मर्यादा पुरुषोत्तम है। गुप्तजी ने कहा है कि ‘‘रामचरित मानस‘‘ के राम ‘‘साकेत‘‘ में नायकों के भी नायक और सबके शिक्षक अथवा शासक के रूप में प्रतिष्ठित है।

तुलसी के राम‘‘हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकाल के भक्तिकाल की सगुण भक्ति काव्यधारा की रामभक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी की अद्वितीय कवि प्रतिभा है। इनका जन्म वि.सं. 1589 में उ.प्र. के बाँदा जिले के राजापुर गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम आत्माराम दूबे तथा माता का नाम हुलसी था। इनके बचपन का नाम ‘‘रामबोला‘‘ था। इनके गुरू का नाम नरहरिदास था। तुलसीदास का विवाह दीनबंधु पाठक की पुत्री रत्नावली से हुआ। रत्नावली की मधुर भर्त्सना से वे रामभक्ति की ओर मुड़े।

****

संदर्भ:-

1.नेमिचंद्र जैन (सं.), मुक्तिबोध रचनावली, भाग - 5, पृ. 290
2.डॉ. धर्मवीर, कबीर के आलोचक, पृ. 31
3.आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ. 92
4.डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, लोकवादी तुलसीदास, पृ. 11
5.प्रो. मैनेजर पांडेय, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, पृ. 35
6.नेमिचंद्र जैन (सं.), मुक्तिबोध रचनावली, भाग - 5, पृ. 292
7.आचार्य रामचंद्र शुक्ल, गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 24
8.प्रो. नामवर सिंह, दूसरी परम्परा की खोज, पृ. 57
9.आचार्य रामचंद्र शुक्ल (सं.), जायसी ग्रंथावली, पृ. 122
10.नेमिचंद्र जैन (सं.), मुक्तिबोध रचनावली, भाग - 5, पृ. 292
11.आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृ. 220
12.डॉ. वीर भारत तलवार, पल प्रतिपल (पत्रिका, अंक-42, लेख-कबीर पर कब्जे की लड़ाई), पृ. 56
13.डॉ. धर्मवीर, हंस (पत्रिका, अंक मार्च 1998, लेख-अभिशप्त चिंतन से इतिहास चिंतन की ओर), पृ. 53
14.प्रो. मैनेजर पांडेय, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, पृ. 26
15 मध्यकालीन हिन्दी कविता, सं. रोहित उपाध्याय और डॉ. हसमुख बारोट, पृ.69

माड़ा की गुफाओं का अध्ययन

डॉ. गोविन्द बाथम
सहायक प्राध्यापक -इतिहास,
शासकीय महाविद्यालय माड़ा, जिला-सिंगरौली (म.प्र.)

मध्य प्रदेश के सिंगरौली जिले में स्थित माला तहसील के पास यह पुरातात्विक गुफाएं स्थित है यहां पर ठोस चट्टानों को काटकर इन गुफाओं का निर्माण किया गया है यह गुफाएं का निर्माण कार्य शुंग काल में किया गया और परवर्ती गुप्त और कल्चर कल में इन गुफाओं का उपयोग सब और वैष्णव संप्रदाय द्वारा किया गया प्रस्तुत शोध पत्र में पुरातात्विक सर्वेक्षण के आधार पर इन गुफाओं का अध्ययन किया गया है:-

गणेश माड़ा गुफा समूह माड़ा तहसील में शासकीय महाविद्यालय माड़ा के पास स्थित है। इस समूह में एक पहाड़ी की पश्चिमी ओर ठोस पहाड़ी को काटकर गुफाओं का निर्माण किया गया है। गणेश गुफा में प्रवेश द्वार चार स्तंभों पर आधारित है, जो की सादा है, जिसके अंदर आयताकार कक्ष है जिसमें एक ओर 16 भुजी नटराज प्रतिमा का अंकन किया गया है। अंदर चार स्तंभों पर आधारित प्रदक्षिणा पथ है व मध्य में एक कक्ष बना हुआ है जो कि खाली है, गुफा की बनावट को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त गुफा का निर्माण शुंग काल में हुआ होगा एवं ऐसा प्रतीत होता है कि मौर्य अंतर काल के बाद बौद्ध भिक्षुओं के दल धर्म प्रचार के लिए भिन्न-भिन्न रास्तों से दक्षिण की ओर गए होगे उनही बौद्ध भिक्षुओ के दलों को स्थानीय शासको द्वारा ठोस चट्टानों को काटकर इन गुफाओं का निर्माण कराया गया है जो परवर्ती काल में बौद्ध धर्म का पतन होने पर अन्य संप्रदायों द्वारा उपयोग में लाई गई होगी। पहाडी के मध्य भाग में भी कई गुफाएं निर्मित की गई है जो समकालीन है। व शीर्ष पर मंदिरों एवं शिवलिंगो के अवशेष प्राप्त होते हैं जो की गुप्तोत्तरकालीन छठवीं-सातवीं शताब्दी के प्रतीत होते हैं।

हनुमान माड़ा गुफा समूह:- यह गुफा समूह गणेश माड़ा के विपरीत दिशा में पूर्व की ओर पहाडी की तलहटी मे स्थित है, मुख्य गुफा एकाश्मक है और अंडाकार है जिसमें प्रवेश करने के लिए एक ही प्रवेश द्वार है जो की काफी छोटा और सकरा है, जिसमे लगभग अन्दर की ओर 5ग्10 फिट का आयताकार कक्ष है, तथा इसके पीछे पृष्ठ भाग में 6ग्6 फिट का कक्ष बना हुआ है जिसके मध्य में एक शिवलिंग स्थापित कर दिया गया है। आयताकार कक्ष के उत्तरी भित्ती पर लगभग 5 फिट ऊची व 16 भुजी नटराज प्रतिमा का अंकन किया गया है, जो कि सिंदर से लेपित है और वर्तमान में जन सामान्य द्वारा उसकी पूजा देवी के रूप में की जा रही है। इस गुफा का निर्माण काल सुंगकालीन प्रतीत होता है तो प्रवर्ती काल मे अन्य सम्प्रदाय द्वारा पूजा के उपयोग मे लाए गए।

सदा शिव गुफा:- यह गुफा हनुमान माड़ा के पास ही स्थित है और प्राकृतिक रूप से निर्मित है, जिसे वर्तमान मे श्रद्धालु ब्रह्म